SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

कृष्णा सोबती के कथा साहित्य में स्त्री विमर्श

अमित शुक्ला, (Ph. D.), हिंदी विभाग,
अनीता साकेत, हिंदी विभाग, एम. फिल., द्वितीय सेमेस्टर,
शा. ठाकुर रणमत सिंह, महाविद्यालय, रीवा, मध्यप्रदेश, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Corresponding Authors
अमित शुक्ला, (Ph. D.), हिंदी विभाग,
अनीता साकेत, हिंदी विभाग,
एम. फिल., द्वितीय सेमेस्टर,
शा. ठाकुर रणमत सिंह, महाविद्यालय,
रीवा, मध्यप्रदेश, भारत

shodhsamagam1@gmail.com

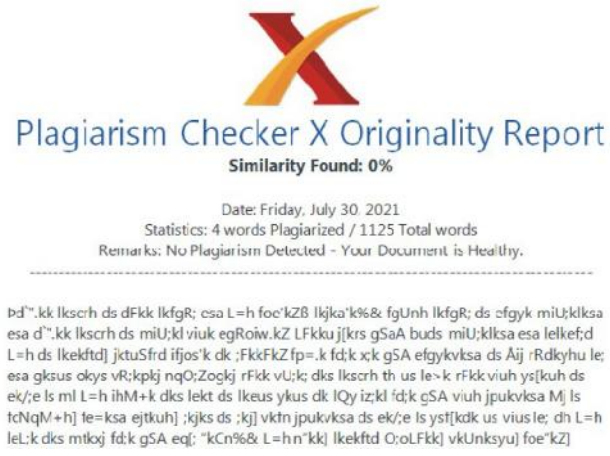

Received on : 29/07/2021
Revised on : -----
Accepted on : 05/08/2021
Plagiarism : 00% on 30/07/2021

Plagiarism Checker X Originality Report
Similarity Found: 0%

Date: Friday, July 30, 2021
Statistics: 4 words Plagiarized / 1125 Total words
Remarks: No Plagiarism Detected - Your Document is Healthy.

शोध सार

हिन्दी साहित्य के महिला उपन्यासों में कृष्णा सोबती के उपन्यास अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। इनके उपन्यासों में समसामयिक स्त्री के सामाजिक, राजनैतिक परिवेश का यथार्थ चित्रण किया गया है। महिलाओं के ऊपर तत्कालीन समय में होने वाले अत्याचार दुर्व्यवहार तथा अन्याय को सोबती जी ने समझा तथा अपनी लेखनी के माध्यम से उस स्त्री पीड़ा को समाज के सामने लाने का सफल प्रयास किया है। अपनी रचनाओं डर से बिछुड़ी, मित्रों मरजानी, यारो के यार, आदि रचनाओं के माध्यम से लेखिका ने अपने समय की स्त्री समस्या को उजागर किया है।

मुख्य शब्द

स्त्री दशा, सामाजिक व्यवस्था, आन्दोलन, विमर्श, अधिकार.

भारत में भी स्त्री विमर्श अधिकतर आम मध्यमवर्गीय सवर्ण स्त्री के सवालों से ही जूझता रहा है। यह दलित स्त्री के दमन, शोषण के प्रश्नों के सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक आधार का समर्थन तो नहीं करता परंतु इस आधार की वजह से अनवरत चल रहे दलित स्त्री की प्रताड़ना का उतना मुखर विरोध भी नहीं होता जितना दलित स्त्री के दमन के आधार को ध्वस्त करने के लिए आवश्यक है। उतना मुखर विरोध शायद संभव नहीं है कारण दलित स्त्री के शोषण के आधार को ध्वस्त करने का अर्थ है मध्य वर्गीय सवर्ण नारीवादी की संपन्नता की नींव पर कुठाराघात करना।

भारत में यह प्रश्न नारी और दलित दोनों के मुद्दों के संदर्भ में उठा है। क्या दलित स्त्री की स्थिति गैर–दलित स्त्री से भिन्न है? इस प्रश्न के उत्तर में मतांतर है। एक मत के अनुसार मनुस्मृति के अनुसार स्त्री और दलित की

स्थिति गैर–दलित स्त्री से भिन्न है? इस प्रश्न के उत्तर में मतांतर है। एक मत के अनुसार मनुस्मृति के अनुसार स्त्री और दलित की स्थिति एक ही है। अतः दोनो को एकजुट होकर अपने शोषण, हनन के विरूद्ध संघर्ष करना चाहिए। इससे भिन्न मताबलंबियों में प्रमुख रूप से एम. प्रभावती, प्रभा मथुल, सुशीला मूले, आशा थोराट, अरूणा लोखंडे, कौशल्या नांडेश्वर आदि के नाम उल्लेखनीय है। इनका तर्क है कि देश के सामाजिक परिप्रेक्ष्य में दलित और सवर्ण स्त्रियों को अलग–अलग प्रकार की बाधाओं से गुजरना पड़ता है।

यदि सवर्ण स्त्री को कमजोर सामाजिक और आर्थिक स्थिति की वजह से भी दलित होना पड़ता है तो सवर्ण औरतें भी दलित गरीब होने की वजह से उसको प्रताड़ित करने के साथ–साथ उसका शोषण करती है। दूसरा, सवर्ण स्त्री शिक्षा तथा अन्य सामाजिक क्षेत्रों में दलित स्त्री से बहुत आगे है। एम. प्रभावती का आरोप है कि स्त्री स्वतंत्रता, समानता आंदोलन सवर्ण स्त्रियों के नेतृत्व में चले है। उन्होंने सवर्ण और मध्यमवर्गीय स्त्रियों के मुद्दों को ही प्रमुखता से लिया है।

स्त्रियों को अपने साथ जोड़ने की जागरूक कोशिश इन स्त्री आंदोलनकारियों ने नहीं की है। सवर्ण स्त्रियों ने दलित स्त्री के साथ कभी भी सहानुभूति नहीं रखी है। इनके द्वारा आयोजित आंदोलनों में न तो दलित स्त्री को और न उसके सवालों को शामिल किया गया है। इसलिए इस मत के समर्थकों का मानना है कि दलित स्त्री के उत्थान के लिए पृथक आंदोलन होने चाहिए।

यदि सवर्ण स्त्री और दलित स्त्री की स्थिति समान है तो क्यों नहीं स्त्री दलित स्त्री की सामाजिक प्रताड़ना का विरोध करती है। इसके विपरीत अक्सर स्त्री दलित स्त्री को प्रताड़ित करती है। महात्मा गांधी ने भी बार–बार सवर्ण स्त्रियों को घर में छुआछूत न बरतने तथा घर की जूठन दलितों को नहीं देने का अनुरोध किया। परंतु इसका प्रभाव ना के बराबर हुआ। यह आज भी बड़े–बड़े शहरों के मध्यवर्गीय घरों में जाकर देखा जा सकता है। इसका यह अर्थ नहीं है कि भारतीय या पश्चिमी नारीवादी विमर्श से दलित और शोषित से जोड़ने की प्रेरणा तथा नारीवादी विमर्श के अंदर पने अनुकूल नारीवादी विचारधारा खोजने या प्रतिपादित करने की प्रक्रिया की प्रेरणा तो उसे नारीवादी आंदोलन से ही मिली है। आवश्यकता है इस आंदोलन की विचारधाराओं में नए वर्गो, वर्णों, समाजों, क्षेत्रों, धर्मों, संप्रदायों, विकलांगों की विशेष परिस्थितियों, के अनुसार नए आयाम जोड़े जाएं।

स्त्री संघर्ष के आयाम

लंम्बे इतिहास के बावजूद ज्ञात इतिहास में स्त्री की स्थिति ने बार–बार आंदोलन के लिए जमीन तैयार की है एवं आंदोलनों ने स्त्री की स्थिति के बदलाव में मदद की है। कई बार आंदोलनो के प्रत्यक्ष स्त्रीवादी न होने पर भी स्त्रियों ने इन्हीं आंदोलनों के मध्य अपने लिए जगह तलाश की है। भारत में स्त्रीवादी का एक महत्वपूर्ण तथा उनका सचेतन आंदोलन न होना तथा बिना किसी पूर्व योजना एवं घोषणापत्र के ये आंदोलन परिस्थितियों की प्रेरित रहें है इसलिए आंदोलन के प्रत्यक्ष दूरगामी प्रभावों से वे बेखबर भी रहे। नारीवाद के प्रचार–प्रसार की सोची समझी रणनीति यहां देखने को नहीं मिलती।

भारतवर्ष में नारीवादी आंदोलनों पर पाश्चात्य आयातित दर्शन के आरोप लगते रहे है। स्वतंत्रता आंदोलन में भी यह विवाद गहराया था, और महिला आंदोलन स्वीकार करते हुए उसे संभावनात्मक रूप से अन्तर्राष्ट्रीय माना था, लेकिन सरोजनी नायडू ने इसे न केवल पाश्चात्य प्रभाव से मुक्त माना बल्कि उसके स्त्रीवादी रूप से भी इनकार किया। भारत में भी स्त्रीवादी आंदोलन अपनी प्रकृति में इसी जमीन से जन्मे, पले, बढ़े, लेकिन विश्व के आंदोलनों की छायाएँ वहां देखी जा सकती है। ये आंदोलन उस जमीन को बनाने में कामयाब हुए जिससे स्त्री के प्रति जवाबदेही बढ़ी, बिना जिम्मेदारी के स्त्री के विषय में कुछ भी कहा जाना संभव नहीं रहा। स्त्रीवादी आंदोलनों की छायाऐं वहां अवश्य देखी जा सकती है। स्त्रीवादी शताब्दी में पुरूषों द्वारा स्त्रियों की स्थिति में सुधार शुरू हुए जिसे शुरूआती तौर पर ब्रिटिश आकांक्षाओं की प्रसन्नता के लिए स्वीकारा गया था।

बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में समानता के अधिकारों द्वारा स्त्री को समाज का उपयोगी सदस्य बनाने से होता हुआ बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में स्वनिर्णय के अधिकार तक विस्तृत हुआ।

निष्कर्ष

भारतीय सामाजिक व्यवस्था का निर्माण इस प्रकार से किया गया जिसमें स्त्रियों को दासी व शोषित का अधिकारी बनाया गया है। स्त्रियों में भी दलित स्त्री और सवर्ण स्त्री में कुछ सीमा तक विभेद है किन्तु शोषण दोनों का हो रहा है। लेखक ने इस पहलू को बखूबी समझते हुए अपनी लेखनी के द्वारा स्त्री सुधार हेतु आन्दोलन की उस पृष्ठभूमि का निर्माण किया, जिसमें स्त्री सुधार होने के साथ ही स्त्रियों के प्रति पुरूष और समाज को जवाबदेही बनाया गया। लेखनी का ही यह परिणाम है कि आज स्त्रियां स्वनिर्णय के अधिकार क्षेत्र तक पहुंचने में सफल हुई हैं व महिला सशक्तिकरण की दिशा में एक मील का पत्थर साबित हुआ है। आने वाले समय में ऐसी ही लेखनी की आवश्यकता है, जो स्त्रियों की समसामयिक दशाओं का चित्रण बिना डरे और बिना रूके कर सके।

संदर्भ सूची

1. जोशी, गोपा, (2006), *''भारत में स्त्री असमानता एक विमर्श''*, हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय, संस्करण, पृष्ठ संख्या 7।
2. कस्तवार, रेखा, (2006), *''स्त्री चिंतन की चुनौतियां''*, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, संस्करण प्रथम, पृष्ठ संख्या 98।

****